ओ३म्

‘राष्ट्र नायक नेताजी सुभाष की राष्ट्र भाषा हिन्दी की भक्ति’

प्रस्तुतकर्ता-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।

हिन्दी प्रेमियों! बड़ी खुशी के साथ (कलकत्ता) नगर में हम लोग आपका स्वागत करते हैं। जो सज्जन कलकत्ता से वाकिफ हैं, उनको यह बतलाने की जरूरत नहीं कि कलकत्ता में पांच लाख हिन्दी भाषा-भाषी रहते हैं। शायद हिन्दुस्तान के किसी भी प्रान्त में--जो प्रान्त हिन्दी वालों के घर हैं, उनमें भी कहीं इतने हिन्दुस्तानी जुबान बोलने वाले नहीं पाये जाते। साहित्य की दृष्टि से भी कलकत्ता का स्थान हिन्दी के इतिहास में बहुत ऊंचा है। मैं हिन्दी भाषा का पंडित नहीं हूं। बड़े खेद के साथ यह बात मुझे स्वीकार करनी पड़ेगी कि मैं शुद्ध हिन्दी बोल भी नहीं सकता। इसलिए मुझसे आप उम्मीद नहीं कर सकते कि मैं हिन्दी साहित्य के प्रारम्भिक इतिहास के विषय में कुछ कहूं। अपने मित्रों से मैंने सुना है कि आजकल के हिन्दी गद्य का जन्म कलकत्ता में ही हुआ था। लाल्लूजी लाल ने अपना ‘प्रेमसामगर’ इसी नगर में बैठकर बनाया और सदल मिश्र ने ‘चन्द्रावली’ की रचना यहीं पर की। और ये ही दोनों सज्जन हिन्दी गद्य के आचार्य माने जाते हैं। हिन्दी का सबसे पहला प्रेस कलकत्ता में ही बना और सबसे पहला अखबार ‘निहार बन्धु’ यहीं से निकला। इसलिए हिन्दी संपादन कला के इतिहास में कलकत्ता का स्थान बहुत ऊंचा है। सबसे पहले कलकत्ता विश्वविद्यालय ने हिन्दी को एम.ए. में स्थान दिया। आजकल भी हिन्दी के लिए जो काम कलकत्ता में हो रहा है, वह महत्वपूर्ण है। इसलिए जिनकी मातृ भाषा हिन्दी है, कलकत्ता उनके लिए घर जैसा ही है। कम से कम वे तो हमारी स्वागत की त्रुटियों या अभाव के लिए हमें क्षमा कर ही देंगे। (स्वामी दयानन्द को वेदों का प्रचार संस्कृत के स्थान पर हिन्दी में करने की प्रेरणा भी कलकत्ता में ब्राह्म समाज के नेता आचार्य केशवचन्द्र सेन ने की थी जिसे उन्होंने तत्क्षण स्वीकार कर लिया था।- लेखक/प्रस्तुतकर्त्ता)

हम आज नेताजी सुभाष चन्द्र बोस के कलकत्ता में महात्मा गांधी की अध्यक्षता में सम्पन्न राष्ट्र-भाषा सम्मेलन में 29 दिसम्बर, 1928 को स्वागत समिति के अध्यक्ष के रूप में हिन्दी में दिये गये उनके भाषण को अक्षरक्षः प्रस्तुत कर रहे हैं। नेताजी ने भाषण के अन्त में कहा है कि यदि हम लोगों ने तन-मन-धन से प्रयत्न किया, तो वह दिन दूर नहीं है कि जब भारत स्वाधीन होगा और उसकी राष्ट भाषा होगी ‘हिन्दी’।

सबसे पहले मैं एक गलतफहमी दूर कर देना चाहता हूं। कितने ही सज्जनों का खयाल है कि बंगाली लोग या तो हिन्दी के विरोधी होते हैं या उसके प्रति उपेक्षा करते हैं। बे पढ़े लोगों में ही नहीं, बल्कि सुशिक्षित सज्जनों में भी इस प्रकार की आशंका पाई जाती है। यह बात भ्रमपूर्ण है और इसका खण्डन करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूं।

मैं व्यर्थ अभिमान नहीं करना चाहता पर इतना तो अवश्य कहूंगा कि हिन्दी साहित्य के लिए जितना कार्य बंगालियों ने किया है उतना हिन्दी-भाषा प्रान्त छोड़कर और किसी प्रान्त के निवासियों ने शायद ही किया हो यहां मैं हिन्दी प्रचार की बात नहीं कहता, उसके लिए स्वामी दयानन्द ने जो कुछ किया और महात्मा गांधी जो कुछ कर रहे हैं, उसके लिए हम सब उनके कृतज्ञ हैं।

बिहार में हिन्दी-भाषी और देवनागरी लिपि के प्रचार के लिए स्वर्गीय भूदेव मुकर्जी ने जो महान उद्योग किया था, क्या उसे हिन्दी-भाषा-भाषी लोग भूल सकते हैं? और पंजाब में स्वर्गीय नवीन चन्द्र राय ने हिन्दी के लिए जो प्रयत्न किया, क्या वह कभी भुलाया जा सकता है? मैंने सुना है कि यह काम इन दोनो बंगालियों ने सन् 1880 के लगभग ऐसे समय में किया था, जबकि बिहार और पंजाब के हिन्दी-भाषा-भाषी या तो हिन्दी के महत्व को समझते ही न थे अथवा उसके विरोधी थे। ये लोग उत्तरी भारत में हिन्दी आन्दोलन के पथ-प्रदर्शक कहे जा सकते हैं। (स्वामी दयानन्द बिहार व पंजाब दोनों प्रदेशों में सन् 1875 से सन् 1883 तक हिन्दी का प्रचार कर चुके थे जिसे उसके बाद उनके द्वारा संस्थापित संस्था आर्यसमाज ने भी जारी रखा। - लेखक/प्रस्तुतकर्त्ता)

संयुक्त प्रान्त (अब उत्तर प्रदेश) में इण्डियन प्रेस के स्वामी स्वर्गीय चिन्तामणि घोष ने प्रथम सर्वश्रेष्ठ मासिक पत्रिका 'सरस्वती' द्वारा और पचासों हिन्दी ग्रन्थों को छापकर हिन्दी साहित्य की जितनी सेवा की है उतनी सेवा हिन्दी-भाषी किसी प्रकाशक ने शायद ही की होगी। जस्टिस शारदा चरण मित्र ने एक लिपि-विस्तार-परिषद को जन्म देकर और 'देव नागर' पत्र निकालकर हिन्दी के लिए प्रशंसनीय कार्य किया था। 'हितवार्ता' के स्वामी एक बंगाली सज्जन ही थे और 'हिन्दी बंगाली' अब भी इसी प्रान्त के एक निवासी द्वारा निकाला जा रहा है। आजकल भी हम लोग थोड़ी बहुत सेवा हिन्दी साहित्य की कर ही रहे हैं। कौन ऐसा कृतघ्न होगा, जो श्री अमृतलाल जी चक्रवर्ती की, जो 45 वर्ष से ही हिन्दी पत्र-सम्पादन का कार्य कर रहे हैं, हिन्दी सेवा को भूल जाये? श्री नागेन्द्र नाथ बसु लगभग 15 वर्ष से हिन्दी विश्वकोष द्वारा हिन्दी की सेवा कर रहे हैं। श्री रामानन्द चटर्जी 'विशाल भारत' द्वारा हिन्दी की सेवा कर रहे हैं। हमारी भाषा के जिन पचासों ग्रन्थों का अनुवाद हिन्दी में हुआ है और उनसे हिन्दी-भाषीयों के ज्ञान में जो वृद्धि हुई है, उसकी बात मैं यहां नहीं कहूंगा।

मैं शेखी नहीं मारता, व्यर्थ अभिमान नहीं करता। पर मैं नम्रतापूर्वक आपसे पूछना चाहता हूं कि क्या यह सब जानते हुए भी कोई यह कहने का साहस कर सकता है कि हम लोग हिन्दी के विरोधी हैं। मैं इस बात को मानता हूं कि बंगाली लोग अपनी मातृभाषा से अत्यन्त प्रेम करते हैं और यह कोई अपराध नहीं है। शायद हममें से कुछ ऐसे आदमी भी हैं, जिन्हें इस बात का डर है कि हिन्दी वाले हमारी मातृभाषा बंगला को छोड़कर उसके स्थान में हिन्दी रखवाना चाहते हैं। पर यह भ्रम निराधार है। हिन्दी प्रचार का उद्देश्य केवल यही है कि आजकल जो काम अंग्रेजी से लिया जाता है, वह आगे चल कर हिन्दी से लिया जाये। अपनी माता से अधिक प्यारी मातृभाषा बंगला को तो हम कदापि नहीं छोड़ सकते। भारत के भिन्न-भिन्न प्रान्तों के भाईयों से बातचीत करने के लिए हिन्दी या हिन्दुस्तानी तो हमको सीखनी ही चाहिए। और स्वाधीन भारत के नवयुवकों को हिन्दी के अतिरिक्त जर्मन, फ्रेन्च आदि यूरोपियन भाषाओं में से भी एक-दो सीखनी पड़ेंगी, नहीं तो हम अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में दूसरी जातियों का मुकाबला नहीं कर सकेंगे। लिपि का झगड़ा मैं नहीं उठाना चाहता। महात्मा जी की इस बात में मैं सहमत हूं कि हिन्दी और उर्दू लिपि दोनों को जानना जरूरी है। आगे चलकर जो लिपि अधिक उपयुक्त सिद्ध होगी, वही उच्च स्थान पायेगी। इसके लिए झगड़ा करना व्यर्थ है। सरल हिन्दी और सरल उर्दू दोनों एक ही हैं।

महात्मा जी से और आप लोगों से मैं प्रार्थना करूंगा कि हिन्दी प्रचार का जैसा प्रबन्ध आपने मद्रास में किया है, वैसा बंगाल और असम में भी करें। स्थायी कार्यालय खोलकर आप लोग बंगाली छात्रों तथा कार्यकत्र्ताओं को हिन्दी पढ़ाने का इन्तजाम कीजिए। इस कलकत्ता में कितने ही बंगाली छात्र हिन्दी पढ़ने को तैयार हो जायेंगे। पढ़ाने वाले चाहिए। बंगाल धनवान प्रान्त नहीं है और न यहां के छात्रों के पास इतना पैसा है कि वे शिक्षक रखकर हिन्दी पढ़ सकें। यह कार्य तो अभी आप

लोगों को ही करना होगा और कलकत्ता के धनी-मानी हिन्दी-भाषा-भाषी सज्जन इधर ध्यान दें, तो कलकत्ता में ही नहीं, बंगाल तथा असम में भी हिन्दी का प्रचार होना कोई बहुत कठिन कार्य नहीं है। आप बंगाली छात्रों को छात्रवृत्ति देकर हिन्दी प्रचारक बना सकते हैं। बोलचाल की भाषा चार-पांच महीने में पढ़ाकर और फिर परीक्षा लेकर आप लोग हिन्दी का कोई प्रमाण पत्र दे सकते हैं। मेरे जैसे आदमी को भी, जिसे बहुत कम समय मिलता है, आप हिन्दी पढ़ाइए और फिर परीक्षा कीजिये। हम लोग जो मजदूर आन्दोलन में काम करते हैं, हिन्दुस्तानी भाषा की जरूरत को हर रोज महसूस करते हैं। बिना हिन्दुस्तानी भाषा जाने हम उत्तरी भारत के मजदूरों के दिलों तक नहीं पहुंच सकते। अगर आप हम सबके लिए हिन्दी पढ़ाने का इन्तजाम कर देंगे, तो मैं यह विश्वास दिलाता हूं कि हम लोग आपके योग्य शिष्य होने का भरपूर प्रयत्न करेंगे।

अन्त में बंगाल के निवासियों और खास तौर से यहां के नवयुवकों से मेरा अनुरोध है कि आप हिन्दी पढ़े। जो लोग अपने पास से शिक्षक रखकर पढ़ सकते हैं, वे वैसा करें। आगे चलकर बंगाल में हिन्दी प्रचार का भार उन्हीं पर पड़ेगा, यद्यपि सभी हिन्दी प्रान्तों से सहायता लेना अनिवार्य है। दस-बीस हजार या लाख-दो लाख आदमियों के हिन्दी पढ़ लेने का महत्व केवल पढ़ने वालों की संख्या पर ही निर्भर नहीं है, यह कार्य बड़ा दूरदर्शितापूर्ण है और इसका परिणाम बहुत दूर आगे चलकर मिलेगा। प्रान्तीय ईर्ष्याविद्वेष को दूर करने में जितनी सहायता इस हिन्दी प्रचार से मिलेगी, उतनी दूसरी किसी चीज से नहीं मिल सकती।

अपनी-अपनी प्रान्तीय भाषाओं की भरपूर उन्नति कीजिए। उसमें कोई बाधा नहीं डालना चाहता और न हम किसी की बाधा को सहन ही कर सकते हैं, पर सारे प्रान्तों की सार्वजनिक भाषा का पद हिन्दी या हिन्दुस्तानी को ही मिले। नेहरू रिपोर्ट में भी इसकी सिफारिश की गई है। यदि हम लोगों ने तन-मन-धन से प्रयत्न किया, तो वह दिन दूर नहीं है जब भारत स्वाधीन होगा और उसकी राष्ट्र भाषा होगी 'हिन्दी'।

यह लेख पं. बनारसीदास चतुर्वेदी के निजी संग्रहालय से प्राप्त कर दैनिक हिन्दुस्तान समाचार पत्र के 14-9-1987 **अंक में प्रकाशित हुआ था। अखिल भारतीय अंग्रेजी हटाओ आन्दोलन के प्रथम सम्मेलन इन्दौर** 1990 **द्वारा इसे अपनी स्मारिका में प्रकाशित किया गया। यहीं से हम इसे साभार एवं सधन्यवाद प्रस्तुत कर रहे हैं।**

-मनमोहन कुमार आर्य
पताः 196 चुक्खूवाला-2
देहरादून-248001
फोनः09412985121